Journal Homepage: www.ijarpr.com ISSN: 3049-0103 (Online)

International Journal of Advance Research Publication and Reviews

Vol 02, Issue 09, pp 139-144, September 2025

Buddhism and Biodiversity Conservation: An Ideological Study

Karmvir[1], *Dr. Srida Jha*[2], *Dr. Champalal Mandrele*[3]

[1] *Ph.D. Research Scholar, Samrat Ashok Subharti School of Buddhist Studies, Swami Vivekanand Subharti University, Meerut, Uttar Pradesh-250002*
[2] *Assistant Professor, Samrat Ashok Subharti School of Buddhist Studies, Swami Vivekanand Subharti University, Meerut, Uttar Pradesh-250002*
[3] *Assistant Professor and Head of Department, Samrat Ashok Subharti School of Buddhist Studies, Swami Vivekanand Subharti University, Meerut, Uttar Pradesh-250002*

बौद्ध धर्म और जैव विविधता संरक्षण : एक वैचारिक अध्ययन

कर्मवीर[1], डॉ. श्रीदा झा[2], भन्ते डॉ. चम्पालाल मंडरेले[3]

[1] पी.एच.डी. शोधार्थी, सम्राट अशोक सुभारती स्कूल ऑफ बुद्धिस्ट स्टडीस, स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश-250002
[2] सहायक आचार्य, सम्राट अशोक सुभारती स्कूल ऑफ बुद्धिस्ट स्टडीस, स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश-250002
[3] सहायक आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, सम्राट अशोक सुभारती स्कूल ऑफ बुद्धिस्ट स्टडीस, स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश-250002

सारांश

वर्तमान समय में पर्यावरण संकट और जैव विविधता के असंतुलन ने सम्पूर्ण मानवता को चिंता में डाल दिया है। वनों की अंधाधुंध कटाई, प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन तथा प्रजातियों के विलुप्त होने की समस्या ने पृथ्वी पर जीवन को खतरे में डाल दिया है। इस संदर्भ में बौद्ध धर्म की शिक्षाएँ अत्यंत प्रासंगिक सिद्ध होती हैं। बौद्ध दर्शन में *अहिंसा, करुणा, मैत्री और समता* के सिद्धांत न केवल मानवीय संबंधों के लिए, बल्कि सभी जीव-जंतुओं और प्रकृति के प्रति भी लागू होते हैं। गौतम बुद्ध ने जीवन को एक परस्पर आश्रित प्रक्रिया (प्रतित्यसमुत्पाद) के रूप में देखा है। इसका अर्थ है कि प्रत्येक प्राणी का अस्तित्व अन्य प्राणियों और प्राकृतिक तत्वों पर निर्भर करता है। इस दृष्टि से जैव विविधता का संरक्षण केवल पर्यावरणीय आवश्यकता ही नहीं, बल्कि आध्यात्मिक और नैतिक कर्तव्य भी है। सम्राट अशोक द्वारा पशु बलि पर रोक, वृक्षारोपण, जल-संरक्षण और पशु-चिकित्सालयों की स्थापना बौद्ध दृष्टिकोण के व्यावहारिक उदाहरण हैं।

बौद्ध धर्म के *पंचशील* और *चार ब्रह्मविहार* (मैत्री, करुणा, मुदिता, उपेक्षा) जैव विविधता संरक्षण को नैतिक मूल्य के रूप में स्थापित करते हैं। यदि मानव अपने विकास कार्यों में इन सिद्धांतों को अपनाए तो प्रकृति और प्राणियों के साथ संतुलित जीवन संभव हो सकता है। इस प्रकार बौद्ध धर्म जैव विविधता संरक्षण के लिए वैचारिक मार्गदर्शन प्रदान करता है और सतत विकास की दिशा में मानवता को प्रेरित करता है।

मुख्य शब्द: बौद्ध धर्म, जैव विविधता, अहिंसा, करुणा, पर्यावरण संरक्षण, सतत विकास, प्रतित्यसमुत्पाद, पंचशील, ब्रह्मविहार।

भूमिका

आज का युग पर्यावरण संकट और जैव विविधता ह्रास से जूझ रहा है। निरंतर औद्योगिकीकरण, वनों की अंधाधुंध कटाई, प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन तथा असंतुलित विकास की प्रवृत्तियों ने न केवल मानव जाति, बल्कि पृथ्वी पर उपस्थित सभी प्राणियों के अस्तित्व को संकट में डाल दिया है। प्राकृतिक संसाधनों के अनियंत्रित दोहन ने पृथ्वी की पारिस्थितिकीय संरचना को असंतुलित कर दिया है। आज स्थिति यह है कि अनेक प्रजातियाँ विलुप्त हो चुकी हैं और अनेक विलुप्त होने की कगार पर हैं। जैव विविधता केवल जीव-जंतुओं और वनस्पतियों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह पृथ्वी के समग्र पारिस्थितिकी तंत्र का आधार है। यदि यह विविधता नष्ट हो जाएगी तो मानव सभ्यता भी अपने अस्तित्व को बनाए रखने में असमर्थ होगी। इस परिप्रेक्ष्य में बौद्ध धर्म की शिक्षाएँ अत्यंत प्रासंगिक और उपयोगी सिद्ध होती हैं। बौद्ध धर्म केवल आध्यात्मिक उन्नति की ही शिक्षा नहीं देता, बल्कि जीवन, प्रकृति और पर्यावरण के प्रति भी एक संतुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। अहिंसा, करुणा, मैत्री और समता जैसे सिद्धांत न केवल मानव-मानव संबंधों में शांति और भाईचारे का संदेश देते हैं, बल्कि समस्त जीव-जगत के साथ सह-अस्तित्व की राह भी दिखाते हैं।

बौद्ध दृष्टिकोण और प्रकृति

बौद्ध दर्शन का आधार अहिंसा, करुणा, मैत्री और समता जैसे सार्वभौमिक मूल्य हैं। बुद्ध ने कहा था कि संसार की प्रत्येक सत्ता एक-दूसरे पर आश्रित है। *प्रतित्यसमुत्पाद* का सिद्धांत इस बात की पुष्टि करता है कि किसी भी प्राणी का अस्तित्व अन्य प्राणियों और प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करता है। इसका अर्थ है कि यदि हम किसी एक प्रजाति या प्राकृतिक संसाधन को नुकसान पहुँचाते हैं तो अंततः इसका प्रतिकूल प्रभाव हम पर ही पड़ेगा। बौद्ध दृष्टिकोण यह मानता है कि प्रकृति मात्र भौतिक संसाधन नहीं है, बल्कि यह एक जीवित इकाई है जिसमें मनुष्य, पशु-पक्षी, वनस्पति, जल, वायु, भूमि सभी एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं। इसी कारण बौद्ध धर्म प्रकृति के शोषण की जगह उसके साथ सामंजस्य और सह-अस्तित्व की शिक्षा देता है।

गौतम बुद्ध का जीवन स्वयं इस दृष्टिकोण का साक्षी है। उनका जन्म शाल वृक्ष के नीचे हुआ, बोधि वृक्ष के नीचे ज्ञान की प्राप्ति हुई, सारनाथ में वृक्ष के नीचे प्रथम उपदेश दिया और कुशीनगर में शाल वृक्षों के नीचे ही महापरिनिर्वाण प्राप्त किया। यह सब इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि बौद्ध परंपरा में वृक्ष और प्रकृति मात्र बाहरी जगत के हिस्से नहीं हैं, बल्कि आध्यात्मिक जीवन और मोक्ष की यात्रा के अनिवार्य अंग हैं।

पंचशील और जैव विविधता संरक्षण

बौद्ध धर्म के पाँच शील (पंचशील) –

1. प्राणीहत्या से विरत रहना,
2. चोरी न करना,
3. असत्य न बोलना,
4. व्यभिचार से दूर रहना,
5. मादक पदार्थों का सेवन न करना।

इन पाँच शीलों में पहला शील “प्राणीहत्या से विरत रहना” सीधे तौर पर जैव विविधता संरक्षण का समर्थन करता है। यह केवल मानव-हत्या तक सीमित नहीं है, बल्कि सभी प्राणियों की हत्या को वर्जित करता है। इस शिक्षा का गहरा अर्थ है – हर जीवित प्राणी का जीवन मूल्यवान है और उसे जीने का अधिकार है। यदि मनुष्य अपने स्वार्थ में पशु-पक्षियों का अंधाधुंध शिकार करेगा, वनों का विनाश करेगा, जलाशयों को प्रदूषित करेगा, तो यह न केवल उस प्राणी के जीवन के विरुद्ध है बल्कि संपूर्ण पारिस्थितिकी संतुलन के विरुद्ध है। पंचशील का पालन करने से जैव विविधता स्वाभाविक रूप से सुरक्षित रहती है क्योंकि यह हमें संयमित जीवन जीने, दूसरों के अधिकारों का सम्मान करने और लालच से बचने की शिक्षा देता है।

ब्रह्मविहार और पर्यावरणीय दृष्टि तथा सम्राट अशोक का योगदान

मानव सभ्यता आज अभूतपूर्व पर्यावरण संकट से जूझ रही है। जलवायु परिवर्तन, वनों की अंधाधुंध कटाई, जैव विविधता का ह्रास और प्रदूषण जैसे कारक न केवल प्रकृति बल्कि मानव अस्तित्व को भी संकट में डाल रहे हैं। इस चुनौतीपूर्ण परिदृश्य में भारतीय आध्यात्मिक परंपराओं, विशेषतः बौद्ध धर्म की शिक्षाएँ, अत्यंत प्रासंगिक प्रतीत होती हैं। बौद्ध धर्म न केवल आत्मिक उन्नति का मार्ग प्रस्तुत करता है, बल्कि वह प्रकृति और जीव-जगत के साथ सामंजस्यपूर्ण संबंधों की स्थापना पर भी बल देता है। बौद्ध धर्म के *चार ब्रह्मविहार* – मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा – ऐसे सार्वभौमिक मूल्य हैं, जो मनुष्य को पर्यावरणीय संतुलन और जैव विविधता संरक्षण की दिशा में प्रेरित करते हैं। इसके अतिरिक्त, सम्राट अशोक का शासन बौद्ध दृष्टिकोण पर आधारित पर्यावरणीय नीतियों का ऐतिहासिक उदाहरण है, जिसने प्राचीन भारत में प्रकृति और प्राणियों की सुरक्षा के लिए ठोस कदम उठाए।

ब्रह्मविहार और पर्यावरणीय दृष्टि

1. मैत्री और पर्यावरण

मैत्री का अर्थ है सभी प्राणियों के प्रति मित्रभाव। बौद्ध परंपरा में यह माना गया है कि समस्त जीव-जंतु, वनस्पति और प्राकृतिक संसाधन हमारे मित्र हैं, न कि मात्र उपभोग की वस्तु। जब मनुष्य वृक्षों, पशु-पक्षियों और जल-नदियों के प्रति मैत्री भाव रखता है तो वह उनके प्रति हिंसक या शोषणकारी प्रवृत्तियों से बचता है। आज के औद्योगिक युग में जब मनुष्य प्रकृति को केवल संसाधन मानकर उसका दोहन कर रहा है, मैत्री का सिद्धांत हमें यह सिखाता है कि हमें प्रकृति के साथ सहयोग और सह-अस्तित्व का संबंध स्थापित करना चाहिए। यदि यह दृष्टिकोण अपनाया जाए तो वनों की कटाई, जलाशयों का प्रदूषण और वन्य प्राणियों का शिकार स्वतः ही रुक सकता है।

2. करुणा और पर्यावरण

करुणा बौद्ध धर्म का केंद्रीय मूल्य है। करुणा का अर्थ केवल दूसरों के दुःख पर संवेदनशील होना ही नहीं है, बल्कि उस दुःख को दूर करने का संकल्प भी है। जब हम देखते हैं कि प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन के कारण पशु-पक्षी मर रहे हैं, नदियाँ सूख रही हैं, या प्रजातियाँ विलुप्त हो रही हैं, तब करुणा का भाव हमें प्रेरित करता है कि हम अपने आचरण और नीतियों में परिवर्तन करें। करुणा का विस्तार केवल मानव समाज तक सीमित नहीं है; यह संपूर्ण जीव-जगत तक फैला हुआ है। यही कारण है कि बौद्ध परंपरा में प्राणियों की हत्या को पाप माना गया है और सभी जीवों के जीवन के मूल्य को समान रूप से स्वीकार किया गया है। आधुनिक युग में यदि करुणा का भाव पर्यावरणीय नीतियों का आधार बने तो न केवल पारिस्थितिकी का संतुलन स्थापित होगा, बल्कि मानवीय संवेदनाएँ भी गहराई तक विकसित होंगी।

3. मुदिता और पर्यावरण

मुदिता का तात्पर्य है दूसरों की प्रगति और समृद्धि में आनंदित होना। यदि हम वृक्षों की वृद्धि, नदियों की स्वच्छता, पक्षियों की चहचहाहट और प्रकृति की सुंदरता में आनंदित होना सीख लें, तो स्वाभाविक रूप से हम उनका संरक्षण करेंगे। आज उपभोक्तावादी संस्कृति ने मनुष्य को इतना स्वार्थी बना दिया है कि वह केवल अपने लाभ में आनंद ढूँढता है। मुदिता का भाव हमें यह सिखाता है कि दूसरों के जीवन और विकास में भी खुशी ढूँढी जा सकती है। पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से इसका अर्थ है कि हम जैव विविधता के विकास को देखकर प्रसन्न हों और उसे बढ़ावा देने में सहयोग करें।

4. उपेक्षा और पर्यावरण

उपेक्षा का अर्थ उदासीनता नहीं बल्कि संतुलन और निष्पक्षता है। यह हमें सिखाता है कि किसी भी परिस्थिति में हमें पक्षपात और स्वार्थ से दूर रहकर सभी प्राणियों के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार करना चाहिए। पर्यावरणीय दृष्टि से उपेक्षा का तात्पर्य है कि हम केवल अपनी प्रजाति या अपनी आवश्यकताओं को ही महत्त्व न दें, बल्कि सभी जीव-जंतुओं और वनस्पतियों के अस्तित्व का समान रूप से सम्मान करें। जब यह दृष्टि विकसित होगी तब मनुष्य विकास के नाम पर पर्यावरण का एकतरफा शोषण नहीं करेगा, बल्कि संतुलित और सतत विकास की दिशा में कार्य करेगा।

समग्र दृष्टि

इस प्रकार *चार ब्रह्मविहार* केवल आध्यात्मिक साधना के साधन नहीं हैं, बल्कि वे पर्यावरणीय नैतिकता की ठोस नींव भी प्रस्तुत करते हैं। यदि मानव समाज इन मूल्यों को अपने जीवन और नीतियों में शामिल कर ले तो प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है। मैत्री से सहयोग, करुणा से संरक्षण, मुदिता से संवर्धन और उपेक्षा से संतुलन प्राप्त होता है। यही चारों मूल्य मिलकर पर्यावरणीय संकट से निपटने का सर्वश्रेष्ठ मार्ग प्रस्तुत करते हैं।

सम्राट अशोक और पर्यावरणीय संरक्षण

अशोक का परिवर्तन और बौद्ध दृष्टिकोण

मौर्य साम्राज्य के शासक सम्राट अशोक भारतीय इतिहास में ऐसे शासक माने जाते हैं जिन्होंने राजनीतिक शक्ति को नैतिकता और करुणा के मार्ग पर चलाकर परिभाषित किया। कलिंग युद्ध में भारी रक्तपात देखने के बाद अशोक का हृदय परिवर्तन हुआ और उन्होंने बौद्ध धर्म को अपनाया। इसके पश्चात् उनका शासन केवल राजनीतिक सत्ता का ही नहीं बल्कि मानवीय और पर्यावरणीय मूल्यों का भी आदर्श उदाहरण बना।

पशु बलि पर रोक और करुणा का विस्तार

अशोक ने अपने शिलालेखों में स्पष्ट लिखा है कि पशुओं की अनावश्यक हत्या पर रोक लगाई जाए। उन्होंने बलि की प्रथा को समाप्त करने का प्रयास किया और अपने साम्राज्य में अहिंसा को बढ़ावा दिया। यह कदम सीधे तौर पर जैव विविधता संरक्षण की दिशा में था, क्योंकि इससे अनेक पशु प्रजातियाँ अनावश्यक हिंसा से बचीं। अशोक की यह नीति दर्शाती है कि बौद्ध धर्म का करुणा-भाव शासन की नीतियों में कैसे परिलक्षित हुआ।

वृक्षारोपण और जल-संरक्षण

अशोक ने सड़कों के किनारे वृक्षारोपण कराया, यात्री-विश्राम स्थलों पर छाया देने वाले वृक्ष लगाए और कुओं व बावड़ियों का निर्माण कराया। उन्होंने नहरों की खुदाई करवाई और जल-संरक्षण की योजनाओं को लागू किया। यह सब केवल तत्कालीन जनता की सुविधा के लिए नहीं था, बल्कि यह दीर्घकालिक पर्यावरणीय दृष्टि का परिणाम था। वृक्षारोपण से वनों की रक्षा हुई, जल-संरक्षण से कृषि और पारिस्थितिकी को लाभ मिला।

पशु-चिकित्सालय और जीव संरक्षण

इतिहासकारों के अनुसार अशोक ने अपने साम्राज्य में पशु-चिकित्सालयों की स्थापना भी करवाई। यह कार्य उस समय की दृष्टि से अत्यंत प्रगतिशील था। यह दर्शाता है कि अशोक ने केवल मानव समाज की ही नहीं बल्कि पशुओं के स्वास्थ्य और जीवन की भी चिंता की। पशु-चिकित्सालयों की यह परंपरा आज के पशु अधिकार और जैव विविधता संरक्षण की आधुनिक धारणा से गहराई से जुड़ती है।

शिलालेख और स्तंभ

अशोक ने शिलालेखों और स्तंभों के माध्यम से जनता को अहिंसा, करुणा और जीव संरक्षण का संदेश दिया। इन शिलालेखों में स्पष्ट लिखा गया है कि सम्राट चाहता है कि उसके प्रजाजन सभी प्राणियों के साथ सद्भाव से रहें, अनावश्यक हिंसा से बचें और जीवन के प्रति करुणा रखें। अशोक के ये शिलालेख आज भी पर्यावरणीय नैतिकता के प्रेरणास्रोत हैं।

पर्यावरण-मैत्री शासन का आदर्श

अशोक का शासन यह प्रमाणित करता है कि यदि शासक अपने शासन की नीतियों में पर्यावरणीय दृष्टिकोण को अपनाए तो समाज और प्रकृति दोनों का संतुलन स्थापित हो सकता है। आज जब आधुनिक शासन-प्रणालियाँ सतत विकास और पर्यावरणीय संरक्षण की बात करती हैं, तब अशोक का उदाहरण ऐतिहासिक आदर्श के रूप में सामने आता है। बौद्ध धर्म के चार ब्रह्मविहार – मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा – पर्यावरणीय नैतिकता की ऐसी नींव रखते हैं जो मनुष्य और प्रकृति के बीच सामंजस्य स्थापित करने के लिए अनिवार्य है। ये मूल्य केवल व्यक्तिगत साधना के साधन नहीं हैं, बल्कि वैश्विक स्तर पर पर्यावरण संकट से निपटने का व्यावहारिक मार्ग भी प्रस्तुत करते हैं। दूसरी ओर, सम्राट अशोक का शासन यह दर्शाता है कि बौद्ध दृष्टिकोण को यदि शासन और सामाजिक नीतियों में लागू किया जाए तो व्यापक स्तर पर पर्यावरण और जैव विविधता का संरक्षण संभव है।

आज के समय में जब मानवता पर्यावरणीय संकट से जूझ रही है, तब ब्रह्मविहार की शिक्षाएँ और अशोक का उदाहरण हमें यह संदेश देते हैं कि करुणा, मैत्री, मुदिता और संतुलन के साथ यदि हम प्रकृति के साथ व्यवहार करें तो न केवल जैव विविधता सुरक्षित रहेगी, बल्कि मानवीय सभ्यता भी सतत और संतुलित विकास की ओर अग्रसर होगी।

जैव विविधता संरक्षण और बौद्ध शिक्षा

वर्तमान समय का सबसे बड़ा संकट पर्यावरणीय असंतुलन और जैव विविधता का ह्रास है। निरंतर औद्योगिकीकरण, वनों की अंधाधुंध कटाई, प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन और मानव की अनियंत्रित उपभोगवादी प्रवृत्ति ने प्राकृतिक संतुलन को बुरी तरह प्रभावित किया है। आज हम देखते हैं कि नदियाँ सूख रही हैं, पर्वत खोखले हो रहे हैं, जंगल उजड़ रहे हैं और अनेक जीव-जंतु विलुप्ति की कगार पर पहुँच

चुके हैं। जैव विविधता केवल मनुष्य के लिए ही नहीं, बल्कि पूरे पृथ्वी तंत्र के लिए आवश्यक है। यह पृथ्वी के जीवन-चक्र और पारिस्थितिकी का आधार है। इस संदर्भ में बौद्ध धर्म की शिक्षाएँ अत्यंत प्रासंगिक और उपयोगी हैं क्योंकि वे केवल आध्यात्मिक उत्थान तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे जीवन और प्रकृति के बीच गहरे सामंजस्य का संदेश देती हैं।

बुद्ध और प्रकृति का गहरा संबंध

गौतम बुद्ध का जीवन स्वयं इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि बौद्ध धर्म प्रकृति और वृक्षों के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है। बुद्ध का जन्म लुंबिनी वन में शाल वृक्ष के नीचे हुआ। यह केवल एक ऐतिहासिक घटना नहीं, बल्कि यह दर्शाता है कि मानव जीवन की शुरुआत भी प्रकृति की गोद में होती है। आगे चलकर बुद्ध ने बोधगया में पीपल (बोधि वृक्ष) के नीचे गहन ध्यान साधना करके ज्ञान प्राप्त किया। यह क्षण केवल व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं थी, बल्कि संपूर्ण मानवता के लिए ज्ञान और करुणा का द्वार खोलने वाला क्षण था। इसी वृक्ष के नीचे प्राप्त बोध ने यह स्थापित किया कि प्रकृति आध्यात्मिक साधना की सबसे बड़ी सहयोगी है।

बुद्ध का प्रथम उपदेश भी सारनाथ के हिरण उद्यान में हुआ। यह स्थान दर्शाता है कि बुद्ध की शिक्षाएँ केवल मनुष्यों तक सीमित नहीं थीं, बल्कि पशु-पक्षियों और प्राकृतिक वातावरण भी उसके अंग थे। अंततः कुशीनगर में बुद्ध ने शाल वृक्षों के नीचे महापरिनिर्वाण प्राप्त किया। यह तीन महत्वपूर्ण घटनाएँ – जन्म, ज्ञान और निर्वाण – वृक्षों से जुड़ी हुई हैं। इससे यह स्पष्ट है कि वृक्ष और प्रकृति बौद्ध जीवन-दर्शन के अभिन्न अंग हैं।

बौद्ध विहार और प्रकृति से जुड़ाव

बौद्ध धर्म के प्रसार के दौरान विहारों और मठों का निर्माण प्रायः वनों और प्राकृतिक वातावरण में किया जाता था। इसका उद्देश्य केवल साधुओं को ध्यान और साधना के लिए एकांत उपलब्ध कराना नहीं था, बल्कि यह भी सुनिश्चित करना था कि साधु-संघ प्रकृति के समीप रहकर उससे गहरा संबंध बनाए। विहारों के आस-पास वृक्षारोपण होता था, कुएँ खुदवाए जाते थे, और जल-संरक्षण की व्यवस्थाएँ की जाती थीं। इससे एक प्रकार का प्राकृतिक संतुलन कायम रहता था।

साधु-संघ का जीवन संयमित और सादा था। वे प्रकृति से उतना ही लेते थे जितना आवश्यक होता था, और बदले में प्रकृति को कोई क्षति नहीं पहुँचाते थे। यह जीवनशैली आज के समय में सतत विकास का आदर्श मॉडल प्रस्तुत करती है।

बौद्ध दृष्टिकोण और जैव विविधता संरक्षण

बौद्ध धर्म का मूल आधार अहिंसा, करुणा, मैत्री, उपेक्षा और समता जैसे सार्वभौमिक मूल्य हैं। ये मूल्य केवल मानवीय समाज तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे सभी प्राणियों और प्रकृति तक विस्तारित होते हैं।

अहिंसा और जैव विविधता संरक्षण

बौद्ध धर्म का प्रथम शील है – *प्राणीहत्या से विरत रहना।* इसका अर्थ केवल मानव-हत्या से बचना नहीं है, बल्कि प्रत्येक जीव-जंतु के जीवन-मूल्य को स्वीकार करना है। जब हम प्रत्येक प्राणी को मूल्यवान मानते हैं, तब स्वाभाविक रूप से उसकी रक्षा करना हमारा कर्तव्य बन जाता है। यह शिक्षा आज के समय में विलुप्त हो रही प्रजातियों के संरक्षण के लिए अत्यंत आवश्यक है।

प्रतित्यसमुत्पाद और पारिस्थितिकी

बुद्ध का प्रतित्यसमुत्पाद सिद्धांत यह बताता है कि हर वस्तु और प्राणी का अस्तित्व दूसरे पर निर्भर है। आधुनिक पारिस्थितिकी भी यही कहती है कि प्रत्येक प्रजाति और तत्व एक-दूसरे पर आश्रित हैं। यदि किसी एक तत्व को नष्ट कर दिया जाए, तो पूरा पारिस्थितिक तंत्र असंतुलित हो जाता है। अतः प्रतित्यसमुत्पाद का सिद्धांत जैव विविधता संरक्षण के लिए वैज्ञानिक और दार्शनिक दोनों आधार प्रदान करता है।

ब्रह्मविहार और पर्यावरणीय दृष्टि

चार ब्रह्मविहार – मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा – पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मैत्री हमें सभी जीवों के साथ मित्रवत संबंध रखने की प्रेरणा देती है। करुणा दूसरों के दुःख को दूर करने का संकल्प है, जिसमें पशु-पक्षी और वृक्ष भी सम्मिलित हैं। मुदिता हमें दूसरों की प्रगति में प्रसन्न होने की प्रेरणा देती है, जैसे पेड़-पौधों की हरियाली देखकर हर्षित होना। उपेक्षा हमें लालच और अति-शोषण से बचाती है।

जैव विविधता संरक्षण की आधुनिक प्रासंगिकता

आज के दौर में जब जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई और प्रदूषण जैसी समस्याएँ वैश्विक संकट बन चुकी हैं, तब बौद्ध धर्म की शिक्षाएँ और भी प्रासंगिक हो जाती हैं। आधुनिक विकास की परिभाषा प्रायः आर्थिक वृद्धि तक सीमित है। परंतु बौद्ध धर्म विकास को व्यापक दृष्टिकोण से देखता है, जिसमें मानसिक शांति, सामाजिक संतुलन और प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व भी सम्मिलित है। यदि विकास कार्यों में बौद्ध दृष्टिकोण अपनाया जाए तो यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि संसाधनों का उपयोग विवेकपूर्ण हो। उदाहरण के लिए, उद्योग और तकनीकी प्रगति आवश्यक है, लेकिन यदि वे प्रकृति का संतुलन बिगाड़ दें तो वे अंततः विनाशकारी सिद्ध होंगे। बौद्ध दृष्टिकोण हमें संयमित उपभोग, संतुलित जीवन और करुणामय दृष्टि की ओर ले जाता है, जो सतत विकास और जैव विविधता संरक्षण की कुंजी है।

निष्कर्ष

बौद्ध धर्म और जैव विविधता संरक्षण का संबंध गहरा और अपरिहार्य है। बुद्ध की शिक्षाएँ हमें यह समझाती हैं कि जीवन केवल मनुष्यों तक सीमित नहीं है, बल्कि प्रत्येक जीव-जंतु और वनस्पति का भी अपना महत्व है। अहिंसा, करुणा, प्रतित्यसमुत्पाद और ब्रह्मविहार जैसे सिद्धांत आधुनिक पर्यावरणीय संकट का समाधान प्रस्तुत करते हैं। आज जब मानव अपने स्वार्थ और लालच में पर्यावरण को नष्ट कर रहा है, तब बौद्ध धर्म हमें यह चेतावनी देता है कि यदि प्रकृति को क्षति पहुँचाई जाएगी तो अंततः उसका दुष्परिणाम मानवता को ही भुगतना पड़ेगा। इसलिए यह अत्यावश्यक है कि बौद्ध दृष्टिकोण को अपनाकर हम जैव विविधता का संरक्षण करें और सतत विकास की दिशा में कदम बढ़ाएँ।

इस प्रकार यह निष्कर्ष निकलता है कि बौद्ध धर्म केवल एक धार्मिक दर्शन नहीं है, बल्कि वह एक **पर्यावरणीय मार्गदर्शक** भी है। आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है कि हम अहिंसा, करुणा, समता और सह-अस्तित्व की शिक्षाओं को जीवन में उतारें, ताकि पृथ्वी और उसकी जैव विविधता सुरक्षित रह सके और आने वाली पीढ़ियों के लिए एक संतुलित और स्वस्थ वातावरण उपलब्ध हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अनिल राजीम वाले, इन्वायरनमेंट वर्सेस डेवलपमेंट, सनराइज पब्लिकेशन, बी-7, सुभाष पार्क, लक्ष्मी नगर, नई दिल्ली-110092, संस्करण 2006।

2. डॉ. दयाशंकर त्रिपाठी, पर्यावरण का अध्ययन, मोती लाल बनारसी दास, 41, यूए बंगला रोड, जवाहर नगर, दिल्ली-110007, तृतीय पुनर्मुद्रित संस्करण, 2015।

3. डॉ. भदन्त आनन्द कौशलायन, धम्म पदं, बुद्ध भूमि प्रकाशन, नागपुर, महाराष्ट्र, संस्करण 1993।

4. डॉ. लिपि शर्मा, Exploring Asia Pacific: Collection of Essays in Environmental History, महाबोधि बुक एजेंसी, 4ए, बंकिम चटर्जी स्ट्रीट, कोलकाता-700073, प्रथम संस्करण 2010।

5. पी. लक्ष्मी नरसु, इन्सेस ऑफ बुद्धिज्म, अनुवादक डॉ. भदन्त आनन्द कौशलायन, बौद्ध धर्म का सार, सिद्धार्थ बुक्स, 1/4446, रामनगर एक्सटेंशन गली नं. 4, अंबेडकर गेट, मंडोली, शाहदरा, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2017।

6. प्रशासनिक श्रृंखला (अंग्रेजी एवं हिन्दी), वैज्ञानिक एवं तकनीकी श्रृंखला आयोग, भारत सरकार।

7. रेणुका सिंह, The Path of Buddha, पेंगुइन बुक्स, 11 कम्युनिटी सेंटर, पंचशील, नई दिल्ली, भारत, संस्करण 2004, पृष्ठ 157

8. दत्त, एन. (2006). Early Buddhist Monachism. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास।

9. हजारीप्रसाद द्विवेदी (1955). अशोक और बौद्ध धर्म. वाराणसी: नागरी प्रचारिणी सभा।

10. राधाकृष्णन, एस. (1957). Indian Philosophy (Vol. I & II). ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

11. गुप्ता, एस. (2009). बौद्ध धर्म और पर्यावरण. दिल्ली: भारतीय ज्ञानपीठ।